अविस्मरणीय परम्परागत प्रतीकात्मक यात्रा मॉ नन्दा राजजात–उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक धरोहर

डॉ0 सरोज वर्मा,
एसोसिएट प्रोफेसर,
एल0एस0एम0पी0जी0,
कॉलेज पिथौरागढ़

सम्पूर्ण भारत में ही नहीं अपितु विश्व/एशिया में बहुचर्चित मध्य हिमालय की नंदा राजजात यात्रा जो बारहवें वर्ष में जनमानस की आस्था व विश्वास से जुड़ी यह सांस्कृतिक यात्रा अपने में अद्भूत है। यह यात्रा हिमालय की भौगोलिक सुन्दरता –लोक संस्कृति आस्था–विश्वास से मानव को एक श्रृंखला में पिरोने का काम करती है। उत्तराखण्ड में नन्दा देवी सर्वत्र पूजी जाती हैं। मॉ नंदा राज तथा नैना देवी सम्पूर्ण विश्व में चर्चित व प्रसिद्ध हैं। नंदा के तीर्थ स्थानों में नौटी तथा कुरूड़ की नंदा गढ़वाल में तथा अल्मोड़ा की नंदा कुमाऊॅ की प्रसिद्ध है।[1]

कुमाऊॅ

गढ़वाल में गौरा का नंदा नाम अधिक जन प्रिय है। यह माना जाता है कि नंदा देवी पर्वत सर्वोच्च चमोली जिले में शिव के वास के रूप में तथा नंदा कोट शिखर में छाये कुहारे/बादल को पर्वतीय क्षेत्र की महिलायें नंदा की रसोई से निकले धुयें उनकी कठिन दिनचर्या पर ऑखों से ऑसू छलकाती प्रतीत होती है।[2] चॉदपुर–लोमा–नागपुर व दशौली–दानपुर के जनमानस नंदाष्टमी पर्व शिव–पार्वती के विवाह के रूप में तथा पिथौरागढ़ में गमरा (गौरा) ऑठू–सॉतू के रूप में बड़े विहंगम रूप में मनाया जाता है। नंदा डोली की यात्रा राजजात नौटी–चॉदपुर से प्रारंभ होकर त्रिशूली नंदा शिखर के एक मील

नीचे वेदनी – कुॅड/होमकुंड तक कर दो विशाल शिलाओं तक चौसिंग्या खाडू (मेढ़ा) Four horried goat) पर नंदा का दहेज–चढ़ावा रखकर नंदा मूर्ति को सोलह श्रृंगार के साथ दशमद्वार डोला बनाकर वहॉ छोड़ते है। यह यात्रा नंदा का मायके से ससुराल जाने के रूप में बड़ी करूणामयी/यादों को लेकर प्रत्येक भक्त नंगे पॉव 288 मील 20 पड़ावों में पूर्ण होती/करती है। इस यात्रा में रूपकुण्ड की भयानक चढ़ाई नरकंकालों की ऐतिहासिक पहेली यात्री दल का भयानक हिमपात तूफान में फंसकर दब जाना चर्चित है।

केदार क्षेत्र की उत्तरी सीमा नंदापर्वत के नाम से जानी जाती है। उत्तराखण्ड के गढ़वाल कुमाऊॅ के नंदा मंदिर प्रसिद्ध है।[3]

1. नंदा नौटी चॉदपुर
2. नंदा कुरूड़ दशौली
3. नंदा देवराड़ा बधाणगढ़ी
4. नंदकेशरी
5. नंदा कुलसारी
6. नंदा लोहागंज
7. नंदा लाता तपोवन
8. नंदा रिण की धार
9. नंदा गएलीपाताल
10. नंदा बैतरणी कैड (बैदिनी)
11. नंदा सेलासमुद्र
12. नंदाकोट वैदिनी
13. नंदा कान्र्च्याबगड़
14. नंदा रूपकुंड
15. नंदा चौखण्डी घुमरी
16. नंदा बार्जिगा
17. नंदा कालीमठ
18. नंदा सेम चॉदपुर
19. नंदा तुंगनाथ
20. नंदा कालीमठ – पीटी सुतोल
21. नंदा बनाणी
22. नंदा कोटी (चॉदपुर)
23. नंदा श्रीनगर
24. नंदा खोला श्रीनगर
25. नंदा सिमली कर्णप्रयाग
26. नंदा बड़कोट चौरास
27. नंदा हरियाली
28. नंदा देवीखेत
29. नंदा लासी
30. नंदा मंदिर घुड़साल मैठाणा
31. नंदा प्रयाग
32. नंदा हिडोली (दसोली)
33. नंदा मिंग
34. नंदा तल्लीधुर पिंडर पट्टी
35. नंदा तलवाड़ी
36. नंदा गैरसैण पैंसर
37. नंदा ननोश दसोली तलली
38. नंदा क्यार्क पौड़ी
39. नंदा पाक्यालधार गोपेश्वर
40. नंदा हेलंग
41. नंदा बद्रीनाथ

मानसखण्ड में वर्णनानुसार कुमाऊॅ क्षेत्र के दक्षिण भाग में नंदगिरी की और नंदा देवी तीर्थ –

पश्चिमाभिमुखः साक्षात हिमाद्रिकथ्यते वुधेः

तस्य दक्षिणाभागे वै नाम्ना नंदागिरि स्मृतः
तत्र नंदा महादेवी पूज्यते त्रिदेशै ऋषि
तां दृष्टवै मानवों लभ्यते एश्वर्यामिह सम्यक
नास्ति नंदा समादेवी भूतले वरदा शुभा।

नैनीताल–अल्मोड़ा– दानपुर– अस्कोट कुमाऊँ के प्राचीन देवस्थल हैं –

1. नंदा नैना नैनीताल
2. नंदा अल्मोड़ा
3. नंदा कोटमाई रणचूलाकोट बैजनाथ
4. नंदा पोथिंग दानपुर तल्ला
5. नंदा शुभ्मगढ़
6. नंदा देवीबगड़
7. नंदा सनेती नाकुरी
8. नंदा उघनथल
9. नंदा बधर दानपुर मल्ला
10. नंदा डंगोली बैजनाथ
11. नंदा मुनस्यारी
12. नंदा दूनागिरी अभिलेख 1029 ई0
13. नंदा मरतोली जोहार
14. नंदा मिलंग
15. नंदा पाछ
16. नंदा विल्जू
17. नंदा मकाया
18. नंदा नंदा जागेश्वर
19. नंदा बधिया कोट दानपुर
20. नंदा बागेश्वर
21. नंदा रानीखेत

वर्तमान में पिथौरागढ़ के सीमांत में रहने वाली शौका जाति दानपुर के दानपुरी मूलतं नंदा के उपासक व कुलदेवी के रूप में नंदा पूजी जाती है। चन्द–कत्यूरी राजवंशों में भी रणचण्डी –इष्टदेवी नंदा रूप में मान्य हैं/मानी जाती है। साथ ही देवमंदिरों का भी व्यापक प्रसार हुआ। ऐसा विदित है कि श्री निबंर वंश संस्थापक को कत्यूरी नरेश ललित शूरदेव के 853 ई0 के ताम्रपत्र में नंदा भगवती के चरण कमलों की शोभा से धन्य होना बताया गया है। 10वीं शती में सलोणादित्य को भी पदमट्–देव ताम्रपत्र में 'नंदा देवी चरणकमल लक्षीमत' बताया गया है। 8वीं शती ई0 में अनेक यात्री उस तीर्थ दर्शन के बाद अमरत्व की कामना से नंदा शिखर की ओर महाप्रयाण हेतु जाया करते थे। जैसा कि जागेश्वर मंदिर अभिलेख में वर्णन आया है। यह सत्य है कि इन्हीं सब में नंदा पूजा जात का औचित्य उत्तराखण्ड की सांस्कृतिक एकता के रूप में मनाया जाता है। सिद्ध करता है जो बड़े ही विस्मय तरीके/रूपों में जनमानस श्रद्धा से इसे मानता है।

मॉ नंदा की प्राचीनता

नंदा की प्राचीनता के संबंध में उत्तरगुप्तकाल से प्राचीन अवगत नहीं होती, क्योंकि इतिहास का पाठक लोक परम्परानुसार भी इतिहासगत जानकारी ग्रहण करता है जो सर्वसिद्ध भी है। चन्द वंश की राजकुमारी नंदा, जिसके देहान्त उपरांत नंदा देवी मंदिर निर्मित हुआ एक विश्वास है। योगमाया जो मानसखण्ड निर्माता गोपराज नंद की पुत्री नंदा बन कंस के हाथ से छूटकर हिमालय की चोटी पर बिठाकर उसे नंदागिरी नाम देकर प्रचारित कर '**पूर्वे नंदाय नमः**' कहा गया है।[4] कदाचित् भुवनकोश मारकण्डेय पुराण की सप्तशती में भी नवदुर्गाओं में नंदा नाम नहीं आया है। महाभारत में बदरिकाश्रम के पास नन्दा देवी या पर्वत का विवरण उल्लिखित नहीं है। सभी पर्वतों के नाम व नंदा देवी पर्वत वृहत्संहिता में वर्णित/वर्णन

आया है। यह ज्ञात होता है कि चमोली जनपद के मंदिरों जिसे पौराणिकों ने सुमेरू कहा है पूजा के अवसर पर **'सुमेरू दक्षिण पार्श्वे'** का वर्णन अवगत होता है।

यह भी माना गया है कि परवर्ती काल में जब शक्ति उपासना के रूप में चर्चित/फैली तो नंदा को देवताओं की अधिष्ठात्री बनाकर/मानकर मेरू की नंदा देवी बना दिया।[5] क्योंकि अनुश्रुति के अनुसार नंदा राजकुमारी जो अल्मोड़ा की चन्द राजपरिवार की अवगत होती है मृत्यु के बाद नंदा देवी मंदिर की स्थापना कर प्रतिष्ठित मानी गई है। एक जागर कथा में राजा भानुप्रताप जो चॉदपुर गढ़ के राजा की दूसरी पुत्री नंदा जिसका विवाह शिव से होना तथा उसकी बड़ी बहन का विवाह धारानगरी के कुंवर कनकपाल से हुआ। यह भी कि अजयपाल या कल्याणपाल को नंदा की राजजात की शुरूआत 16 वीं शती ई0 में करने का श्रेय जाता है।

तमाम वर्णनेां के आधार पर चन्द्र शासकों ने अल्मोड़ा (कुमाऊं) 1563 ई0 के आसपास अल्मोड़ा राजधानी व (9वीं शती ई0) गढ़वाल में मानी जा सकेगी। लेकिन कत्यूरी राजाओं व जागेश्वर अभिलेख यह अवगत कराते हैं कि नंदा भगवती–नन्दशिखर की उद्भावना 7वीं शती ई0 से पूर्व हो चुकी थी तथा 5वीं 6वीं ई0 में यह 'नंदा' नाम आस्तित्व में आया क्योंकि सम्भव तथा इनको किसी अन्य नाम से पूजा जाता होगा। पुराण 'एक नॅशा का विवरण देते हैं। यह अवगत होता है कि कुषाण शक काल में ननना का प्रचार हुआ। ऋग्वेद में ननना शब्द व सुमेरियाई लोग कई हजारों वर्ष पहले 'ननना भी पूजा करते थे। ऐसा ज्ञात होता है।

देवी भागवत में नंदा नन्दप्रिया निद्रा नृनुता नंदनायिका दुर्गा सप्तशती **'ऊॅ नंदा भगवती'** भविष्यति नन्दजा का वर्णन/उल्लेख मिलता है। कुषाण काल की मथुरा से प्राप्त एकनंशा की मूर्ति, सप्तमातृका मूर्तियों के बीच में द्विभु जी दॉये बलराम बॉये बासुदेव अंकित जिन्हे दो हजार वर्ष प्राचीन माना गया है। द्विभुजी, चर्तुभुजी, अष्टभुजी रूपों का वर्णन बृहत्संहिता में आया है। साथ ही एक नंशा का उल्लेख हरिवंशपुराण में बलराम–कृष्ण के मध्य सोने का कमल धारण किये वर्णन है।

ऐतिहासिक रूप में यह नंदा शैव शक्ति के रूप में कालरात्रि, कात्यायनी, विंध्यवासिनी, पार्वती, चण्डी त्रिनेत्रा भी मानी जाती है। कनिष्क के समय में भी हिमालय में किदर कुषाणों (परवर्ती कुषाण शासक) के समय प्रचार हुआ जो गुप्तकाल में भी विद्यमान थे और जिन्हें जीतने को समुद्र गुप्त को नेपाल से आगे पश्चिम में कर्तपुर हिमालय, काश्मीर, पंजाब, सीमाप्रांत तक बढ़ना पड़ा था। बौद्धों ने नंशा को नंदा बनाया था जिसका प्रमाण जातक (जिल्द 3 पृ0 340) में हिमवंत में नन्दमूलक पब्भार का उल्लेख है। यह अवगत होता है कि नंदमूलक क्षेत्र ही बौद्धायन था जिसे मानस खण्ड में बन्ध्या तथा आज बधाण कहा जाता है। कुषाण तथा शकों ने जिस एक नंशा का प्रचार किया वह मूलतः नंदा देवी थी।

मातृ देवी के लिए नंना शब्द इण्डो आर्यन या हिक्सौस (यझ) कश जाति ने सुमेरिया को दिया या सुमेरी लोगों से आर्यो ने ग्रहण किया यह कहना दुष्कर लगता है। ननना मॉ के लिए ऋग्वेद में स्पष्ट उल्लेख है। यह ज्ञात है कि ईरान, सुषा में तथा बेबीलोनिया में नंदा की पूजा व गांधार (काबुल) में पूजी जाती है। एच0 इंगहोल्ट ने नैना, ननई, नैनी पार्शियन, स्कल्पचर्श आफहंट्रा में ननना के विस्तार पर प्रकाश डाला है। साथ ही आर्मीक भाषा के शिलालेख में देवी ननै राजा एवं निशा ईरान के पहलवी भाषा में यजन, नेनी, सतपन, आपदन (नैना देवी का मंदिर) शब्दों का प्रयोग

हुआ है। यह विदित ही है कि बलूचिसतान में ननना, वीवीननना नाम से तथा काश्मीर, कुल्लू में नैनी नाम से वर्तमान में पूजी जाती है। हिमांचल में यह स्थान नयना देवी शक्तिपीठ है। यह लोक विश्वास है कि यहॉ पर सती के नैत्र गिरे थे। यही विश्वास नैनीताल की नैनादेवी के बारे में भी जनविश्वास प्रचलित है। यह भी जाना/माना जाता है कि जहॉ पर इनकी जिह्वा गिरी थी उसे हिमांचल प्रदेश में ज्वालादेवी व गढ़वाल में ज्वाल्या नाम से जाना जाता है तथा चन्द्रबदनी, सुरकंज कुंजापुरी आदि देवी स्थानों पर ही जनश्रुतियॉ मिलती है। नैणी तथा नोटी के लिये भूदेव के बागेश्वर शिलालेख में ग्रामोल्लेख के रूप में निनून नुटि उल्लेख आया है और स्याही देवी के निकट नैनी, धौलादेवी के निकट नैनी तथा चौरार्खा में देवी सभी देव स्थानों/स्थलों के निकट देवी का होना सिद्ध करता है कि नैना या नैनी मातृदेवी के रूप में कुषाणों के समय में पार्वत्यप्रदेश में पूजित हुई होगीं।

पाणिनि का चातुरर्थिक सूत्र में 4/2/67–तदस्मिन्न स्तीति देशे तन्नाम्नि जैसे– उदुंवरा, सन्ति, आस्मिन्देशे औदुंम्बरा 4/2/68 तेन निकृतम 4/2/69 तस्य निवास तथा 4/2/70 अदूरभवश्च वर्णित है।

यह सर्वसिद्ध वर्णन है जिसमें ननना का उल्लेख माता के लिये ऋग्वेद में आया है – मैं ऋचाओं का स्तोता हूॅ। मेरे तात वैद्यक का काम करते है और मेरी ननना सिलपीसने का कार्य करती है। – कारूरह ततो भिषगुपल प्रक्षिणी ननना 9–112–3। अतः ऐतिहासिक चरणों में नंदा नैना को मातृदेवी के रूप में जानी गई हैं। देवी भागवत ने ऋग्वेद –10–125 के ही भाग को लिया है। आरण्यक उपनिषद् में शक्ति (अम्बिका) का नया नाम – वह उमा, पार्वती, हमेवती के नाम से वर्णित है।

तदुपरांत यह महाशक्ति के रूप में त्रिदेव में स्थित हुई है ऐसा माना जाता है। यथा–महालक्ष्मी, महासरस्वती व महाकाली। यह शक्ति स्वरूपा मारकण्डेय पुराण दुर्गासप्तशदी अंश में दया, शांति, धात्रि, तुष्टि, बुद्धि प्रदाता माता के रूप में व्यापकता स्वरूप में मानी जानी लगी साथ ही इसी क्रम में देवी भागवत् पुराण वृहद् काव्य हो गया। 108 देवी स्थान 51 शक्ति पीठों की उद्भावना भी सामने आ गई और मानी जाने लगी।

यही नंदा माता आदि देव शिव को अधिक प्रिय होना हमारे सामाजिक जीवन में स्वीकार किया जाने लगा।

यह सत्य स्वीकार्य है कि हिमालय में तो हिमालय पुत्री की पूजा आराधना तीन स्वरूपों प्रचण्ड स्वरूप की पूजा कापालिक/कालमुख सम्प्रदाय के लोग, शात्र लोग काम रूपिणी के रूप में आनन्द भैरवी, त्रिपुर सुन्दरी (भुवनेश्वरी) ललिता तथा बैष्णव या शेष जनमानस सौम्य स्वरूपा की पूजा करने लगे।[6] शिव प्रसाद नौटियाल लिखते हैं कि पर्वत श्रृंखलाओं की देवी में उफराई देवी सर्वत्र सबसे अधिक सुयश देने वाली देवी मानी जाती हैं। इस प्रकार के थान/स्थान बालीकंडास्यूॅ में फुलखाल, चौथान ढौंढियालस्यूॅ सीमा पर दिव्य मंदिर अवस्थित है। एटकिंसन कुमाऊॅ हिल्स (उत्तराखण्ड) में उफराई देवी (उपनी) को हीनवर्ग की देवी माना है और लिखा है कि वह भी नंदा है।[7]

कदाचित् मौखिक इतिहास जागर के आधार पर जब चॉदपुर राजा ने अपने राजगुरू नौटियालों की उफराई देवी की डोली के साथ गॉव–गॉव उत्सव डोली के साथ जाते देखा तो शर्मनाक बताया। इस पर उफराई देवी रूष्ट हो गई। राजा का खजाना नष्ट हो गया। तब राजा ने दण्ड दिया और कनेडा गॉव को गूॅढ़ में चढ़ा दिया। इसी प्रकार

की एक कथा शैलेश्वर मंदिर को बनने से रोकने पर मढ़ी का जोगी रूष्ट हो गया। जिसके श्राप से राजा मढ़ी रह जायेगी पर गढ़ी नहीं रहेगी यही हुआ। चॉदपुर गड़ी का पतन चन्द राजा के द्वारा हुआ। अजयपाल को भागकर देवलाढ़ (श्रीनगर)आना पड़ा।

नंदा जात की ऐतिहासिकता

भिलंग के राजा सोतपाल ने अपनी पुत्री का विवाह मालवा से आये कलकपाल से कर, चॉदपुर गढ़ दे दिया था।[8] इसे विलियम्स ने कंक/गंग जिसने गुजरात से आकर पहले गंगोह कस्बा बसाया था। जहॉ कैक नाम के सिक्के मिले हैं जो गढ़वाल आकर चॉदपुर अधिपति बना था।[9] 1796 ई0 में प्रद्युम्नशाह के मंत्रियों से प्राप्त कर श्रीनगर में तैयार किया था कि उसका नाम भोगदत्त था। वह अहमदाबाद गुजरात से आया था।[10] हाईविल ने पुनः 182 में लिखा भोग दत्त के चॉदपुर गढ़पति बनने की घटना 360 वर्ष पूर्व अर्थात् 1460 ई0 में हुई थी।[11] डबराल ने एटकिन्सन के इस विवरण को 1849 ई0 में तैयार की गई अनुश्रुति माना है – कनकपाल की मृत्यु 699 ई0 में हुई थी। उसका चौबीसवॉ वंशज इंदिलपाल में अपना जामाता बनाकर चांदपुर गढ़ दहेज में दिया था।[12]

यदि हम इतिहास को देखें तो भिलंग (नागपुर) राज्य का एक समय अत्यंत शक्तिशाली राज्य था। जिसकी सीमा उत्तर में बदरीनाथ से लेकर दक्षिण में मंगलौर देववंद के घोड़ों के तबेलों तक विस्तृत थी। उस राज्य के बाबन गढों से एक गढ़ चॉदपुर गढ़ भी था।[13] एटकिंसन ने कत्यूर वंश और काबुल के शाहकटोर वंश का पूर्वज एक ही पुरूष जिस कंक में माना है, जो वास्तव में कनिष्क था। कनिष्क के उत्तराधिकार बाद में गुप्तकाल में किदर–कुषाण कहलाये। परन्तु अपने पूर्वज नाम कंक की स्मृति उन्हें सदैव बनी रही। दिल्ली के राजा क्षेत्रपाल के पुत्र राज्यपाल द्वारा चॉदपुर राज्य स्थापना और उस वंश में भानुप्रताप का होना तथा उसके जमाता कनकपाल का होना जिस पर रतूड़ी ने लिखा है[14] कि यदि कंदिलपाल को भी कम्पात बताया गया है तो हार्डविक और हेमिल्टन के विवरण सही माने जा सकते हैं।

लखनऊ अभिलेखागार के अभिलेखों/विवरण से जाना जाता है कि अजयपाल का समकालीन दुमाग गढ़पति मंगल सिंह, भानु प्रताप का पुत्र था। अतः भानु प्रताप निसंतान नहीं था और रतूड़ी का निसंतान भानुप्रताप की पुत्री का विवाह धार के कनकपाल से किया जाने का उल्लेख इसे 888 ई0 का समय बताना नितांत भ्रामक कहे। मंगल सिंह ही वह कंडारा गढ़पति है, जो अजयपाल के हमले में मन्दाकिनी में डूब कर मरा था। जानकारी के अनुसार पालीपछाऊॅ का कत्यूरी राजा वीरमदेव (ब्रहमदेव) था।[15] जिसका विस्तृत राज्य सातपुत्रों के अधीन एक पुत्र पानुप्रताप के नाम ही जाना जाता है। बीरमदेव का समय 1450 ई0 के निकट/आस पास था। उसका पुत्र 1480 ई0 के आस पास राज्य करता था। भारतीचन्द का समय 1444–1499 तक माना जाता है। 1500 ई0 लगभग श्रीनगर को अजयपाल ने राजधानी बनाया। आदि बदरी तीर्थ बड़ी ख्याति प्राप्त था। ये भी जोशीमठ के समान अपनी राजधानी को दूर स्थान्तांतरित करना चाहते थे। ऐसा विदित है कि चौदपुर गढ़ का पुनः ध्वसं 1681 में उद्योतचन्द ने किया था। यह कि चन्द राजा के समय चौदपुर पर कत्यूरी राज्य नहीं था। चन्द राजा के आक्रमण से सुरक्षा के लिए कठैतों ने लमछड़ी बन्दूकें भेजी थीं। तब सम्भवतः तोपाल राज्य को मैदान से आई नवागत शक्ति ही माना जाना चाहिये, जिसे बारूद/आतिशबाजी का ज्ञान था। इसी प्रकार गुजरात के तटवर्ती राज्यों को ही अरबों

के सम्पर्क से भारत में सबसे पहले हुआ। तदुपरांत 1526 ई0 में उत्तरी भारत में पश्चित उत्तर से बाबर की तोपों का आक्रमण झेलना पड़ा। यह मानना होगा कि धार गुजरात से आने वाले अजयपाल के पूर्वज ही थे।

नंदा का धार मालवा दक्षिणी राजस्थान तथा राठियों से घनिष्ठ संबंध रहा। गुजरात में वर्तमान में भी गुग्गली ब्राहमण निवास करते हैं। यह सर्वमान्य व बहुश्रुत है कि अग्निकुण्ड से नन्दिनी की रक्षार्थ परमार सहित चार वीरों की कथा का वर्णन है। नौंवी तथा चौदहवीं शदी ई0 में धार गुजरात से एक दल कनकपाल की अध्यक्षता में व दूसरा भोगदत्त या कंदिल पाल के रूप में आया। ऐसा माना जाता है कि एक दल भोज परमार (1010–1035) ने कन्नौज विजय कर केदारनाथ मंदिर बनवाया था। यही क्रम पंवार वीरों बधाण चॉदपुर पर कत्यूरियों का राज्य– उससे पूर्व शूलिकों का जिन्हें दक्षिण में चूलिक 'चालुक्य और उत्तराखण्ड में कुशली और पौख वंशीय थे।[16] गुजरात नरेश कुमारपाल चालुक्य ने 1150 ई0 के बाद उत्तराखण्ड की सात बार यात्रा की। ऐसा माना गया है कि उत्तराखण्ड के अभियान में कुमारपाल का सेनापति यशोधवल जो परमार जाति का माना जाता है जिसे गढ़वाल की गाथाओं में जसधवल कहा गया है।

चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराज 1094–1142 के समय में भोज परमार के निर्बल उत्तराधिकारी उसके अधीनस्थ सामंतों की श्रेणी में आये साथ ही धारा वर्ष को यशोधवल का पुत्र बताया गया है।[17] कुमारपाल ने पंचनंद प्रदेश को जीतकर जालंधर तक विजय की थी और गंगा को पूर्वी सीमा बनाया। उसने जैन धर्म को प्रश्रय देने के बाद परमशैव बन सोमनाथ तथा केदारनाथ मंदिरों का जीर्णोद्वार करवाया साथ ही सारी विजयों को शंकर नंदा की कृपा माना। तथाकथित प्रमाणों के परिप्रेक्ष्य में यशोधक्ल की उत्तराखण्ड की यात्रा जो बुढ़ापे में कुमारपाल के साथ धर्मयात्रा कर महाप्रयाण यात्रा उत्तराखण्ड में हुई होगी। ऐसा माना जाता है और ज्येष्ठ पुत्र धारावर्ष आबू का नरेश बना। जगदेव प्रतिहार से 1184 ई0 लगभग पृथ्वीराज चौहान के सेनापति जगदेव प्रतिहार वीरतापूर्वक युद्ध करता प्रतीत होता है। जसधोल के कनिष्ठ पुत्र भी नंदराज जात गाथा में वर्णित है। शायद हिमपात में वह बच गया। उसी के वंशज कन्सुआ ग्राम के कुंवर आज भी राजजात में उस दुर्घटना स्थल पर जाकर यशोधवन को तर्पण देते है। ऐसा माना जाता है।

नंदा की राजजात गाथा में यह वर्णन है कि कन्नौज के राज जसधवल की रानी बल्लभा चॉदपुर गढ़ी के राजा की पुत्री थी। इनकी ईष्टदेवी नंदा का दोस उन्हें लगा अवर्षण, सूखा, प्राकृतिक आपदा ने कन्नौज राज्य में त्राहि मचा दी तब उनके कुलगुरू ने बताया कि रानी के पितृगृह की देवी का दोष है। जिसका निवारण राजजात यात्रा में सम्मिलित होकर किया जा सकता है। जिस हेतु राजा–रानी–पुत्र–पुत्री –नर्तक–नर्तकियों के साथ वाणगांव में शामिल हुये। लेकिन रणजीधार पर इस दल ने वर्जित सामग्री बाजे–गाजे–जूते महिलाएं बच्चों में भी शामिल रखा साथ ही नर्तकियों को गोल–घेरे में नाच कराया गया जो वर्तमान में पातर नन्चौणिया के नाम से जानी जाती है। रानी गर्भवती थी जहॉ वगुवावासा में उन्हें प्रसव हुआ जहॉ सम्पूर्ण राज परिवार को रूकना पड़ा शेष दल को ज्यूंरागलीचार में रूकना पड़ा। रात में भयानक वर्फवारी तूफान के कारण सभी जन रूपकुण्ड में समा गये, जिसके कंकाल आज भी वहॉ पर बिखरे पड़े है। शेष शिला रूप में देखे जा सकते हैं।[18] मेरे द्वारा भी वर्तमान में राजजात यात्रा में देखे गये है। वर्ष 2014 स्वयं दृष्टा

रूपकुण्ड 16500 फुट की ऊँचाई, रास्ते सिमटे इस हिमानी झील का नाम 1898 में ब्रिटिश अनुसंधान कर्ताओं को ज्ञात हुआ। इसके संबंध में अनेकों 1907 में लौंग स्टाफ, 1927 में अल्मोड़ा के डिप्टी कमिश्नर रटलेज, 1942 में मधवाल व स्काटिश ले0 हैमिल्टन[19] को वही सामग्री प्राप्त हुई जो मुझे भी सौभाग्य से वर्ष 14 प्रणाम राजजात यात्रा में देखने को मिली।

लेकिन रूपकुण्ड एक अद्भुत झील के रूप में देखने को मिलती है जो चारों तरफ हिम से ढकी पहाड़ी तथा नरकंकालों के ढेरों के रूप में देखे जा सकते/जाते है। इसे एक दुखद घटना से जोड़ा जाता है। जिसमें मुहम्मद तुलगल की कराजल विजय, शहजादा सुलेमान का श्रीनगर राज्य में शरण लेना, जिसे औरंगजेब के चंगुल से बचने के लिये तिब्बत की ओर जाना बताता है।[20] स्वामी प्रणवानंद के अनुसार यह यात्री दल बर्फीली तूफान के शिकार होकर रूपकुण्ड की ओर लुढ़क गये।[21]

कदाचित् उत्तराखण्ड यह अलौकिक यात्रा अपने में सम्पूर्ण विश्व में अद्भुत मान्यता रखती है। यह यात्रा या हमारा इतिहास अपने ऐतिहासिक पहलुओं के साथ–साथ मौखिक इतिहास अनुमान दस्तावेजों, किम्बदंतियों के रूप में भी सिद्ध होता है। क्योंकि यशोधवल का उत्तराखण्ड आगमन 1150 ई0 के बाद के दशक में मान्य है। स्वयं दृष्टा के रूप में मुझे भी इस महायात्रा का सुअवसर मिला फिर भी रूपकुण्ड के अवशेषों के लिये 1841 में रणजीत सिंह के डोंगरा काश्मीरी जनरल मोटावर सिह की तिब्बत विजय तदुपरांत वापसी में दुःखद अन्त से जोड़ा जाता है।

सम्पूर्ण ऐतिहासिक जानकारी स्थानीय इतिहास मौखिक इतिहास के बाद भी हम माँ नंदा की कुमाऊँ में अपनी क्षेत्रीयता/स्थानीय रूप से पूजा की जाती है करते है। यह नैनीहाल अल्मोड़ा में भाद्रपद सप्तमी–अष्टमी को दानपुर, बधाण, कत्यूर, घाटी, जोहार, दशोली, गैरसैण, चॉदपुर में भी मनाया जाता है। पिथौरागढ़ में भी यह जात, त्यौहार ऑठू–सॉतू के रूप में सौ (सवा) पौधों से बनाया गौरा के रूप में (गमरा) मनाया जाती है। जो एक परम्परा के अनुसार मनाया जाता है। इसमें शिव–पार्वती (महेश्वर–गौरा) को बनाकर पुरोहित के माध्यम से पूजा कर झोड़ा खेल (चांचरी) गोल घेरे में महिला–पुरूष खड़े होकर लगाकर की जाती है जो लगभग व्यवस्थानुसार एक सप्ताह व उससे अधिक भी महिलाओं द्वारा आयोजित किया जाता है। नन्दाष्टमी को अल्मोड़ा, नैनीताल में नंदा नैना देवी का विहंगम मेला लगता है। जोहार में भी एक लम्बे बॉस पर रंग बिरंगे कपड़े तथा लाल ध्वज नंदा का धातु से मुखौटा बनाकर काले रंग के चंबर पुच्छ बांधकर सार्वजनिक स्थल पर रखा जाता है। पूजा–अर्चना–बलि–जुलूस की शक्ल में मोदी लाकर समूह नृत्य समारोह किया जाता है।[22] नंदा नौटी में भाद्रपद नवमी–चैत्र संक्राति को हरिताली पूड़ा के रूप में मनाई जाती है। यहॉ पर शिला पर स्वास्तिक चिन्ह है मान्यता है बताया जाता है कि शक्ति यंत्र भूमिगत है। जात का आयोजक नौटि के पुरोहित नौटियाल, कन्सुआ के कुंवर, बधाण के बुटेलों, पूर्व में उ0प्र0 सरकार तथा उत्तराखण्ड सरकार के प्रयासों से चलती रही है/चल रही है।

यह नंदा राजजात मान्यतानुसार देवराड़ा–ककुड़ में नंदा बधाण के दो प्रसद्धि मंदिर जिसमें भाद्रपद से पौस मास तक नंदा का आवास, देवराड़ा व माघ से सावन तक कुरूड़ दशौली में होता है। मंदिरों में शिलामूर्ति स्यायी रूप से अवस्थित है। इनकी वार्षिक जात भादों शुल्क पक्ष मुक्ता भरणी सप्तमी को बेदनी पहुॅची है। कुरूड़ से उत्सव यात्रा के रात्रि विश्राम जिनमें सरीक होने

का मुझे भी पूर्वजन्म के फलानुसार अवसर प्राप्त हुआ। उसतोली, सरपाणी, मेरी बंगाली, डुंगरी सोना, धरयार (नंदकेसरी) कुमाऊॅ–गढ़वाल की मिलन भूमि यानि सम्मिलित यात्रा फलत्यागांव, भंडोली, बाण लाटू देवता से नंदा इन्हें आगे कर देती है। जो मार्ग बताते है तदुपरांत गैरोली जंगल में विश्राम कर यहॉ पर मिले लोहे के बाण गढ़वाल विश्ववि0 संग्रहालय में संग्रहित हैं। तदुपरांत नंदिनी बुग्याल तथा बेंदिनी कुंड जिसका घेरा 3/4 किमी0 जो धनी हरी घास से घिरा है इसी स्थान पर पिंड तर्पण जसधवल के लिये हेाता है। मुंडोली, बगड़गाड़, लुवाणी, उण, गोरा, हाट दो विश्रामों में नंदा पहॅुचती हैं। कुरूड़ में नंदा देवी मंदिर संवत् 1971 में जीर्णोद्धार करवाया गया। इन्हें राज राजेश्वरी प्रद्युनशाह की 1797 ई0 एक सनद प्रति के अनुसार श्री नंदा राजेश्वरी लिखा है। नंदा देवी का मंदिर कुरूड़ में गांव के शीर्ष पर देवसारी तोक में निर्मित है। एक अनुश्रुति है कि ऐरी किंकर (किनगोड़ा) के बड़े झाड़ में पश्चिम दिशा से आया चौर्सिग्या मेड़ा (चार सिंगोकाल भिड़ा (भेड़) पूर्व से आये एक भैंसे से भिड़ा जिससे हुई खुर्द– बुर्द उखाड़–पखाड़ ने एक देवमूर्ति सिंहवाहिनी मूर्ति आज भी पूजी जाती है, अवस्थित है।

नौटी (चॉदपुर) से प्राप्त प्रपत्रों के आधार पर 1886, 1905, 1925, 1951, 1968, 1987 बड़ी–बड़ी राजजाते होती थीं। अनुश्रुति यह भी है कि इसका श्रेय अजयपाल को जाता है। 1500 में यशोधवल की राजजात में रूपकुण्ड दुर्घटना के कारण वेदिनी बुग्याल से आगे स्त्री बच्चों को नहीं जाने दिया जाता है। लेकिन अपनी यात्रा के दौरान मां की कृपा से मुझे उस स्थान तक जाने का श्रेय परमपिता परमात्मा ईष्टदेव तथा माता–पिता एवं स्वजनों को देती हूॅ। कृपा से मिला उक्तवत् विवरण तथा स्वयं 2014 नंदाराज यात्रा में शामिल होने के बाद मॉ नंदा की प्राचीनता–महानता–व्यापकता नंदा भगवती का विवरण जागेश्वर (अल्मोड़ा) अभिलेख में भी मिलता है। टिहरी–वर्जिगा मूर्ति जिसे 10वीं शती ई0 की मानी जाती है। यात्रा मार्ग में देवाल 10वीं शती ई0 की मूर्ति है। कैलुआविनामक जो 8वीं शती ई0 भी मानी जाती हैं कत्यूरी ताम्रपत्र यह उल्लेखित करते है कि मॉ नंदा उन नरेशों की कुलदेवी मान्य थी, जो यह सिद्ध करती हैं कि इस यात्रा का चलन 8वीं में हो गया था।[23]

इतिहास के पाठक को यह ज्ञात है कि बौद्ध–जैन ग्रंथों में जता/जात वर्णित है। निदान कथा जातक में आया है कि भक्तों के सिर पर थाली (सोने की) में दीपक लेकर तीर्थ यात्रा किया करते थे। पाण्ड–नंदा, अपरनंदा हेमकूट की यात्रा की, हर्ष ने स्वयं यात्रा की। डॉ0 शिवप्रसाद डबराल लिखते है कि जात खसों की तीर्थयात्रा का प्राचीन स्वरूप है। आज भी हम हिमांचल, काश्मीर, रवाई में अलग–अलग देवी–देवताओं की जाते मनोयोग से मनाते हैं। मॉ नंदा की जात में सर्वाधिक महत्व चार सिंगा (चौसिग्या) मेड़ा जो हर बारहवें वर्ष में मॉ की कृपा से कन्सुआ के कुंवर की मनौती के मांगने पर यह दिवसीय पैदा होता है। उसे बड़े मनोयोग से पाला जाता है। इसके लिये रिंगाल की छतौली (छाता) में मॉ की सोने की मूर्ति/प्रतिमा रख मेमोचार के बीच पूरे मंगल गीतों के साथ विधि–विधान से उनका निवास होता है। यह विशेष गांव–समुदाय के लोगों द्वारा बनाई जाती है। जिससे स्थानीय शिल्प कला–श्रृद्धा देखने को मिलती है।

इस मनमोहक यात्रा में आकर्षण का केन्द्र चौसिंग्या खाड़ (चार सिंग वाला मेढ़ा) जिसे राजयात्रा में सजा कर, भोजन, कलेऊ (धान का बना चावल हलवा पंजरी) से भरा थैला, मॉ का काली यंत्र

(कुलसारी की पूजा) थराली (सुनाओं व देवराड़ी) में नंदा डोली चॉदी के जेवरों से सजाना, चेपड़ों में मॉ की डोली निर्मित व ठीक की जाती है। नंद केशरी में धार्मिक सार्वजनिक नंदा मंदिर (गढ़वाल कुमाऊॅ) की देवियों का मिलन स्थल बृहद् रूप में डोलों/अवतरण अद्भुत रूपों में देखने को मिलता है। मॉ नंदा के बाल/केश इस स्थान पर फंसने के कारण यह स्थान नंद केशरी चर्चित हुआ।

देवाल – व्यावसायिक स्थल शिवरात्रि का मेला आयोजित कैल नदी पिंडर के संगम स्थल पर होता है। यात्रा फाल्दिया गांव (काण्डे) ल्वाणी (पिलखड़ा) पिल्खाड़े नामक दैत्य का बध/संहार के कारण यात्रा मुंदोली–लोहाजंग–(लोहार नामक असुर संहार जिसका साक्ष्य देवदार का वृक्ष वर्तमान में भी अवस्थित है) वाण गॉव में नंदा के धर्म भाई लाटू देवता का मंदिर जहॉ पर इस यात्रा का ग्रामीण/प्रशासन समुदाय द्वारा स्वागत किया जाता है। वेदनी बुंगाल (हरी घास फूल) में चौंसिग्या खाड़ की पूजा –हर छोटी–बड़ी छात यहॉ पर आती हैं। पातर नौचजिया जहॉ कन्नौज के राजा यशधवल व प्रजा/जनता के साथ नृतकियों द्वारा नृत्य किया गया और दैवी प्रकोप के कारण पत्थर शिला बनने का वर्णन मिलता है। गणेश जी की पूजा स्थान कैलाश विनायक पर्वत है। राजा यशधवक द्वारा अपनी प्रजा के साथ किये गये विश्राम स्थल एक गुफा समान वगुवावासा कही जाती हैं जहॉ पर रानी बल्लभ को प्रसव वेदना के साथ बच्चे का जन्म हुआ। यह माना जाता है कि भगवती मॉ का वाहन वाघ यहॉ पर रहता था। रूपकुण्ड जो सबसे दुर्गम विफर चढ़ाई वाले स्थान को पार कर ब्रहमकमल देखते हुये इस स्थान पर पहुॅचा जाता है। यहॉ पर मॉ पार्वती तथा भगवान शिव ने अपनी प्यास बुझाई थी। साथ ही कुण्ड में अपनी परछाई देखकर श्रृंगार किया था। कहा जाता है कि रानी द्वारा प्रसव काल में इस कुण्ड में स्नान करने बाद सम्पूर्ण प्रजा यहॉ पर दब गई जिनके नर कंकाल अभी भी देखे जाते हैं। यहॉ तक जाने का अवसर मुझे भी प्राप्त हुआ। इसके बाद के पड़ाव (वापसी वाले) में मेरा जाना नहीं हो पाया।

तमाम अध्ययनों कहानियों मौखिक इतिहास के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह राजयात्रा लोहाजंग में लोहे के तीर मिलने तथा भंयकर युद्ध होने की सम्भावना के व्यक्त करते लगते है। इसी मार्ग पर ज्यूरांगली 17500 फुट की ऊॅचाई जिसे इतिहासकार मानते हैं कि स्वर्गारोहण की चाह ने महाप्रयाण का स्थान रूपकुण्ड को बनाया होगा। इस स्थान को यमुना दत्र बैष्णव ने मृत्यु गली संज्ञा दी है। यह एक विशद अध्ययन होगा कि इन नर कंकालों को कहॉ का कब का माना गया है। लेकिन प्राप्त दो खोपड़ियों को महाराष्ट्र की एक खाश ब्राहमण जाति का होना, डी0एन0ए0 व कंकाल की बनावट के मिलते है। इतिहास कैप्टन शूरबीर सिंह पंवार – अजयपाल पंवार वंशीय राजाओं के 37 वां राजा थे/मानते है। डॉ0 रतूड़ी अजयपाल ने 1512 में चॉदपुर गढ़ी से देवलगढ़ में राजधानी स्थानांतरित की ऐसा व्यक्त करते हैं।

नंदा का धार्मिक महात्म्य अपने में अद्भुत है। बद्रीनाथ धाम में संरक्षित ताम्रपत्रों ने मॉ नंदा तीनों लोकों को आनन्द प्रदान करने वाली कहा गया है। मॉ भी गाथा लोक गाथाओं में ममता मयी करूणामयी रौद्ध रूप में जगत कत्याणकारी चर्चित होती है। इनकी गढ़वाल कुमाऊॅ में 41 तथा 21 स्थानों में पूजी जाती है।

संदर्भ सूची

1. एच0जी0बाल्टन –ब्रिटिश गढ़वाल गजेरियर पृ0 188
2. मदनचन्द्र भट्ट – लेख या नंदाकाकी –नंदा देवी स्मारिका –नैनीताल 1983–84 पृ0 02
3. यमुनादत्त बैष्णव – अशोक कुमाऊॅ का इतिहास पृ0 300–305
4. यमुनादत्त बैष्णव – अशोक कुमाऊॅ और गढ़वाल के तीर्थ स्थल पृ0 17
5. वही – पृ0 303
6. जयशंकर मिश्र – प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास पृ0 719
7. ई0टी0एटकिंसन – वही पृ0 847
8. पातीराम – गढ़वाल एनशियट एण्ड माडर्न पृ0 184
9. ई0टी0एटकिंसन – हिमालय डिस्ट्रिकट्स रिलीजन इन द हिमालय पृ095
10. कैप्टिन हार्डविक जर्नी टुश्रीनगर – एशियाटिक रिसर्चेडा जिल्द 6 पृ0 337
11. हैम्लिटन ज्या गफिकल, स्टेटिस्टिकल एण्ड हिस्टारिकल डिस्क्रिप्सन आफ हिन्दुस्तान खण्ड –2
12. शिवप्रसाद डबराल – उत्तराखण्ड का इतिहास –भाग 4 पृ0 168
13. राजकीय अभिलेखागार –रजिस्टर टिहरी, राजदरबार प्रथम पृ0
14. हरिकृष्ण रतूड़ी –गढ़वाल का इतिहास पृ0 161–162
15. वर्मा सरोज – कत्यूरी घाटी का ऐतिहासिक एवं पुरातात्विक अध्ययन 2004– लघु शोध प्रबंध
16. शिव प्रसाद नैथानी – शोधपत्र उत्तराखण्ड में हूण एक अध्ययन उत्तराखण्ढ शोध संस्थान/देहरादून 1988
17. एपिग्राफिया इंडिका – जिल्द – 8 प्र–21
18. संस्मरणीय राजयात्रा – वर्ष – 2014
19. वाल्टन ब्रिटिश गढ़वाल गजेटियर रिप्रिन्ट 1921 पृ0 188–89
20. वररूचि – लेख रूपकुण्ड रहस्य नवभारत टाइम्स 17 जून
21. प्रजवानन्द लेख – रूपकुण्ड का रहस्य
22. सुरेन्द्र सिंह पांगती – लेख शक्ति का प्रथम चरित्र नंदा उत्तराखण्ड शोध संस्थान स्मारिका देहरादून पृ0 20–2
23. वर्मा सरोज कत्यूर घाटी का ऐतिहासिक एक पुरातात्विक अध्ययन 2002–2004 लघु शोध

26.08.2014 19:45

29.08.2014 22:43

28.08.2014 03:24

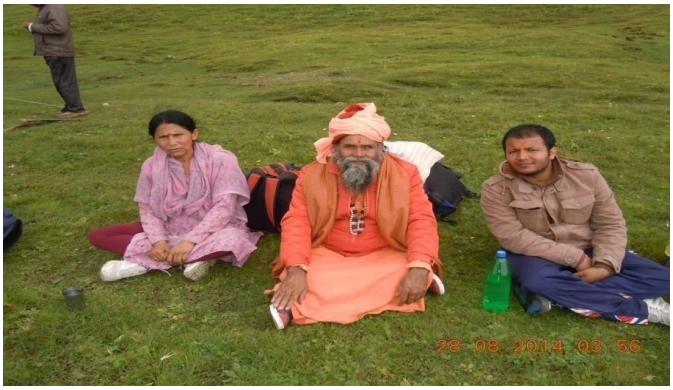
28 08 2014 03 56

28 08 2014 18 42